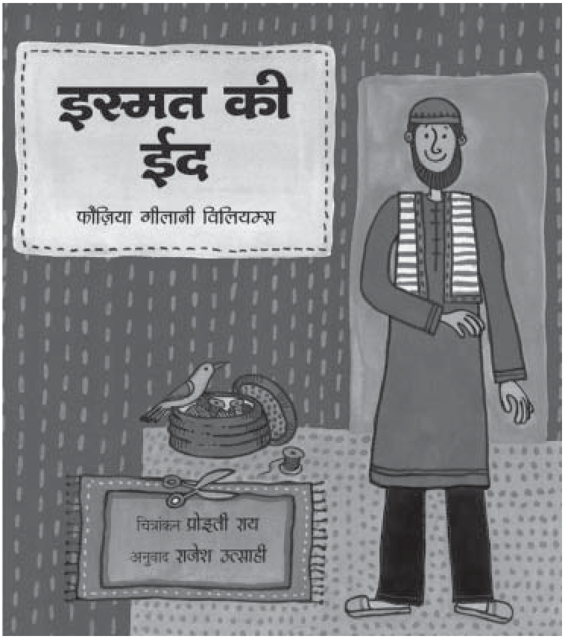
शिक्षकों की कलम से

एक कहानी कई विचार

नीतू यादव



हम देखते हैं कि विभिन्न आर्थिक और सामाजिक पृष्ठभूमि के बच्चों के आपस में खेलने की जगहों, बाज़ारों और रहने की जगहों, और तो और, स्कूलों में भी ऐसा विभाजन है कि इन बच्चों के बीच मेलमिलाप के मौके ही नहीं बनते। इस स्थिति के चलते विचारों और भावनाओं के वास्तविक आदान-प्रदान सम्भव नहीं हो पाते हैं। आज के समय में बच्चों को शुरुआत से ही इस तरह का एक्स्पोज़र देना अत्यन्त महत्वपूर्ण है जिससे कि बच्चों के मन में विभिन्न सामाजिक तबकों के प्रति एक समझ और संवेदनशीलता का भाव विकसित हो। इसे सम्भव बनाने के लिए ज़रूरी है कि बच्चों के साथ ऐसी किताबों को साझा किया जाए जो अलग-अलग तरह के जीवन और संस्कृतियों की झलक दिखाती हों। इस तरह विचारों का आदान-प्रदान और एक-दूसरे की ज़िन्दगी को जानना-

समझना एक किताब के सुरक्षित माध्यम से हो पाना सम्भव है। किताबों पर गम्भीर और गहरी चर्चाएँ चलाई जा सकती हैं ताकि बच्चों के मन में जो चलता है, उसे समझने और उन विचारों को एक तार्किक दृष्टि दे पाने के अवसर बन पाएँ।

उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में हाल ही में बच्चों के साथ साझा की गई एक किताब *इस्मत की ईद* से जुड़े कुछ अनुभव साझा करना चाहूँगी। तूलिका प्रकाशन द्वारा 2007 में प्रकाशित किताब *इस्मत की ईद* एक तुर्की कहानी है। इसे लिखा है फौज़िया गिलानी विलियम्स ने जिसका अनुवाद राजेश उत्साही ने किया है और प्रोइती राय ने किताब चित्रित की है।

बच्चों के मन समझना

यह कहानी मैंने दो अलग-अलग पुस्तकालयों में सुनाई। चूँकि कहानी मुस्लिम परिवेश की झलक दिखाती है तो सबसे पहले मैंने यह कहानी 'नया बसेरा' पुस्तकालय में सुनाई। यहाँ सभी मुस्लिम बच्चे आते हैं। यह कहानी उनके अपने रिवाज़ से जुड़ी थी। मैंने किताब का नाम छुपाते हुए पहला पेज दिखाकर बच्चों से पूछा, "इस कहानी में क्या होगा और यह कहानी किस बारे में होगी?" एक बच्चे ने कहा, "इस आदमी ने टोपी पहनी है और कालीन भी दिख रही है। यह नमाज़ पढ़ने जाएगा।" एक बच्चा बोला, "ये टेलर की कहानी होगी।" बाकि बच्चे भी इस बात को ही दोहरा रहे थे। फिर मैंने कहानी का नाम बताया, "इस कहानी का नाम है *इस्मत की ईद*" और दुबारा पूछा, "अब बताओ, कहानी में क्या होगा?" इस बार ज़्यादा जवाब आए। किसी ने कहा, "सब इसके पास ईद के लिए कपड़े सिलवाने आएँगे।" किसी ने कहा, "ईद पर सब नए कपड़े लेते हैं। यह टेलर होगा तो इसकी खूब कमाई होगी और यह मज़े से ईद मनाएगा।" एक ने कहा, "इस्मत इसकी बेटी होगी।" एक बच्ची ने कहा, "दीदी, यह सबके कपड़े सिलने के चक्कर में खुद के लिए कुछ नहीं लेगा।" ये कथन कहानी से काफी मिलता-जुलता था और इसके साथ ही हम कहानी सुनने-सुनाने की ओर बढ़े। बच्चों ने जब कहानी में पहला चित्र देखा तो पता चला कि इस्मत चप्पल जोड़ने का काम करता है।

मेरे श्रोताओं को थोड़ा अजीब लगा, कहने लगे, "हमारे यहाँ तो कोई मुसलमान यह काम नहीं करते।" मैंने कहा, "मैंने तो बेचते देखा है; यह जूते बेचता है।" तो बच्चों का बोलना था, "बेचने जाते हैं पर जोड़ते नहीं। चित्र में तो इसकी दुकान जूते जोड़ने जैसी दिख रही है।" कहानी को मंज़ूर कराने के उद्देश्य से और आगे बढ़ने के लिए मैंने कहा, "यहाँ अपने शहर में नहीं तो शायद किसी और जगह करते हों।" बच्चे मान गए, "हाँ, यह हो सकता है।"



फोटो: नीतू यादव

आगे कहानी के मुख्य घटनाक्रम पर पहुँचे तो बच्चों को बहुत मज़ा आया। उन्होंने भी अपने घरों में बनने वाले पकवानों के बारे में बताया। कुछ बच्चों ने बताया कि शीर कुरमा, सेवईं कैसे बनाई जाती हैं। ईदी और ईद पर क्या करते हैं, के बारे में भी बताया। चर्चा करते समय एक खास बात पर मेरा ध्यान गया। जब बच्चे अपनी बातें बता रहे थे तो उनके चेहरों पर चमक थी। कहानी के बीच में बच्चों के संवाद ज़्यादा हो रहे थे। कहानी में आए नामों को भी बच्चे अपने परिवेश से जोड़कर देख रहे थे, जैसे 'यास्मीन' सुनते ही दो बच्चों ने कहा, "ये हमारी बाजी का नाम है।" वे अपनी बातें कहने के लिए उतावले थे, मुझे उन्हें रोकना पड़ा और कहना पड़ा कि बाकी बातें हम कहानी पूरी सुनने के बाद करेंगे।

कहानी सुनाने के बाद मैंने बच्चों से पूछा कि उनको कहानी कैसी लगी और किसको क्या पसन्द आया और क्या नया पता चला। बहुत सारे जवाब थे, एक बच्चे ने कहा कि उसे इस्मत बहुत अच्छा लगा, वह सबके लिए तोहफे लाता है, "मेरे अब्बू भी लाते हैं।" किसी को पूरी कहानी अच्छी लगी। एक बच्चे ने कहा, "जिस चित्र में इस्मत छोटी पेंट पहनता है, वह चित्र बहुत अच्छा लगा।" बच्चों को इस कहानी में कुछ नया नहीं लगा पर उनको कहानी अच्छी लगी क्योंकि कहानी ईद के बारे में थी। 15-20 मिनट बच्चों के साथ बहुत अच्छी चर्चा चली। कहानी सुनाने के बाद उस किताब को 3-4 बच्चे इशू करवाने के लिए भी आ गए।

पूरी बातचीत में यह समझ आया कि जब कहानी अपने खुद के परिवेश से जुड़ी होती है, तो बच्चे उसे अपने अनुभवों से जोड़कर समझते हैं। पढ़ने के आनन्द के साथ-साथ अपनी बातें बिना संकोच कहते हैं। डेनिस वॉन स्टोकर भी अपने लेख *बच्चों के विकास में साक्षरता और किताबों का महत्व* में कहती हैं, 'पढ़ने का असली सुख ऐसी चीज़ों को पढ़ने के सन्तोष से मिलता है जो हमें निजी तौर पर सम्बोधित करती हैं, हमें निजी तौर पर छूती हैं।" यह बहुत महत्वपूर्ण है और समझ भी आता है। इसके साथ-साथ किताब की भूमिका को अन्य परिप्रेक्ष्य में समझकर भी देखा, क्योंकि किताबें अभिव्यक्ति की क्षमता को बढ़ाने के साथ-साथ संस्कृतियों की वाहक भी होती हैं जिनमें भाषा, खानपान, रीतिरिवाज़, जीवनशैली, अनुभव इत्यादि को समझने का मौका मिलता है। *इस्मत की ईद* कहानी में भाषा से लेकर खान-पान की एक झलक मिलती है। पर ऐसी कहानियाँ किसी और समुदाय के बच्चों में स्पष्टतः अलग तरह से समझी जाती हैं। इसके बारे में दूसरे अनुभव में देखने-समझने को मिला।

एक फर्क अनुभव

इस कहानी को प्रेमपुरा बस्ती के पुस्तकालय में भी सुनाया। यहाँ ज़्यादातर बच्चे हिन्दू हैं और कुछ मुस्लिम भी हैं पर जिस दिन कहानी सुनाई, उस दिन कोई भी मुस्लिम समुदाय का बच्चा/बच्ची नहीं आए थे। पहले की तरह जब किताब का मुख्यपृष्ठ दिखाते हुए पूछा कि इस कहानी में क्या होगा, तो एक बच्चे ने कहा, "यह कहानी मुसलमान के बारे में होगी।" एक बच्चा बोला, "मुसलमान बकरी काटते हैं और मटन खाते हैं।" "आप नहीं खाते?" मैंने पूछा। एक बच्चे ने कहा, "हम तो अण्डा भी नहीं खाते।" जब मैंने पूछा कि क्या मटन खाना गलत बात है तो कुछ जवाब नहीं दिया।

मैंने बाकि बच्चों को चर्चा में जुड़ने के लिए प्रोत्साहित किया तो 3-4 बच्चे बोले, "नहीं दीदी, हम भी खाते हैं। हमारे पापा के दोस्त भी मुसलमान हैं और वे ईद पर हमारे पापा को मटन भी देते हैं।" इस चर्चा के बाद जो बच्चा मटन नहीं खाता था, वह शुरू में जैसे स्वाभिमान से बोल रहा था, उसके परे अभी थोड़ा चुप-सा हो गया था। उसे सहज करने के लिए मैंने चर्चा को कहानी की तरफ मोड़ते हुए, कहानी का नाम बताते हुए पूछा कि कहानी में क्या होगा। बच्चे कहने लगे, "ईद मनाएँगे।" एक आवाज़ आई, "दो ईद होती हैं, एक में बकरा काटते हैं और एक में सिवईं बनाते हैं।" मन में सन्तोष हुआ यह सुनकर कि बच्चे मुस्लिम त्यौहार और खाने के दूसरे प्रकार को भी जानते हैं।

फिर कहानी सुनाना शुरू की और पूरी कहनी सुनाने के दौरान बस एक

जगह रुके, जब कहानी में इस्मत की माँ हबीबा कहती है - 'मुझे शीर कुरमा बनाना है'। मैंने पूछा, "शीर कुरमा क्या होता है?" तो एक लड़की ने कहा, "कुछ मटन का बनता होगा।" मैंने पूछा, "पक्का?" तो बाकियों ने भी कहा, "हाँ, होता होगा।" मुझे थोड़ा अचरज हुआ क्योंकि यह ऐसा इलाका तो नहीं था जिनका मुस्लिम परिवारों से कोई जुड़ाव ही न हो और 9 बच्चों में से एक ने भी नहीं कहा कि यह मटन से नहीं बनता। फिर मैंने बच्चों को बताया कि शीर कुरमा सूखे मेवों और दूध से बनता है और खीर की तरह मीठा होता है। एक बच्चे ने पूछा, "सूखा मेवा क्या होता है?" तो मैंने बताया, "काजू, बादाम, किशमिश इन सबको सूखा मेवा कहते हैं।"

कहानी के बाद चर्चा में 'कहानी कैसी लगी' और 'किसको क्या पसन्द आया' से बात शुरू की तो ज़्यादातर बच्चों ने कहा कि जब पेंट छोटी हो जाती है तो मज़ा आता है। एक बच्चे ने कहा, "मुझे शीर कुरमा अच्छा लगा।" एक बच्चे ने यह भी कहा, "जब सब एक साथ मिलकर मस्जिद जा रहे थे तो मुझे अच्छा लगा।" मैंने पूछा, "आपको क्या नया पता चला?" तो 3-4 आवाज़ें एक साथ आईं, "शीर कुरमा और मीठी ईद पर क्या होता है।" और एक बच्चे ने कहा, "अस्सला-वालेकुम का मतलब भी समझ आया।"



बातचीत का विश्लेषण

दोनों जगह कहानी सुनाने के अनुभव अलग-अलग रहे। जहाँ मुस्लिम बच्चों ने कहानी में गहरी दिलचस्पी दिखाई और वे खुद को कहानी से जोड़ पा रहे थे, वहीं गैर-मुस्लिम बच्चे अनुमान और सुनी हुई बातों के आधार पर जवाब दे रहे थे।

दोनों ही जगहों के अनुभवों के आधार पर यह समझ बनी कि वर्तमान में पास-पास रहने पर भी अलगाव की स्थितियाँ ज़्यादा हैं जो बच्चों में भी दिखाई देती हैं। कुछ पूर्वाग्रह जैसे मुस्लिम हैं तो मांस ही खाते होंगे, ये बातें बच्चों के मन में भी चलती हैं। इन पर चर्चाएँ करते रहने से बच्चों को अलग-अलग संस्कृतियों को समझने के मौके मिलेंगे और उनके पूर्वाग्रहों पर भी वे तार्किक होकर सोच पाएँगे। किसी एक पक्ष के विचार के हावी होने से बच पाएँगे और उनके विचारों में हम नए विचारों को जोड़ पाएँगे।

मैंने मेरी दो अन्य साथियों जिनमें एक हिन्दू और दूसरी ईसाई धर्म को मानती है, से उत्सुकतावश पूछा, "शीर कुरमा एक मुस्लिम व्यंजन है, बताओ कैसे बनता होगा?" तो दोनों ने ही कहा कि चिकन से बनता होगा जबकि क्षीर का मतलब दूध होता है। हम शब्द को ठीक से पढ़ें तो कुछ सही अनुमान लगा सकते हैं पर प्रायः यह देखने में आता है कि पूर्वाग्रह तार्किक अनुमान पर भारी होते हैं। इसी तरह मुझे याद आया, मैंने एहसान नगर पुस्तकालय में लक्की को जो पारधी समुदाय का बच्चा है, नाबिया किताब पढ़ने को दी तो उसने यह कहते हुए वापस कर दी थी कि "मुझे मुसलमान की किताब नहीं पढ़ना।" फिर बात करने पर वह पढ़ने के लिए मान गया था।

एक तरफ जहाँ मुझे यह किताब विभिन्न समुदायों में मुस्लिम परिवार की सामान्यता दिखाने के लिए बहुत ही अच्छी लगी, मेरे समूह की पुस्तकालय चलाने वाली मुस्लिम कार्यकर्त्ता, अफसाना को यह किताब बिलकुल नहीं जमी। किताब के आखिरी पन्ने पर पूरा परिवार मस्जिद की तरफ देख रहा है। अफसाना का कहना था कि औरतें मस्जिद के अन्दर नहीं जातीं, और अगर कभी जाती भी हैं तो ऐसे बाल खुले रखे हुए नहीं दिखती हैं। अफसाना की बात से मैं भी अपनी समझ पर वापस सोचने के लिए मजबूर हुई।

क्या यह किताब सच में किसी अन्य समुदाय की बारीकियों को ऐसे मासूमियत में पेश करते हुए नज़रअन्दाज़ कर देती है? यह भी समझ में आया कि इसके कुछ पहलू लोगों को स्वीकार्य नहीं हैं। मुझे यह भी महसूस हुआ कि हमारे बाल-साहित्य में बहुत कम किताबें हैं जो एक संस्कृति-विशेष को प्रस्तुत करती हैं। हम उन्हें नकारना नहीं चाहते, पर

बहुत विकल्प भी नहीं हैं जिनसे मैं तुलना कर पाऊँ।

रूदीन सिम्स बिशप (1990) ने कहा था कि "किताबें कभी खिड़कियाँ होती हैं, जो एक दूसरी दुनिया की झलक देती हैं। कभी ये खिड़कियाँ, काँच के दरवाज़ों जैसी होती हैं, जिनके अन्दर-बाहर पाठक जा पाते हैं, वे लेखक द्वारा रची दुनिया में कुछ देर के लिए जुड़ पाते हैं। और कभी-कभी ये हमारे लिए आइने जैसी होती हैं, और इनमें हम अपने आप की पुष्टि कर पाते हैं।"

इस्मत की ईद कहीं-न-कहीं उन सीमित किताबों की श्रेणी में है जो एक समुदाय की पुष्टि कर रही है और दूसरे को उसके कुछ सतही पहलुओं को देखने का मौका दे रही है, और इसलिए आज के समय में बहुत महत्वपूर्ण किताब है। लेकिन अभी मुझे अपने बच्चों तक ऐसी और किताबें ले जाने का बेसब्री से इन्तज़ार है जिनसे मैं उन्हें मुस्लिम परिवार के बच्चों की छोटी-छोटी खुशियों और परेशानियों, डर और चिन्ताओं, बाहर से अपमान और अन्दर के संघर्ष तक ले जा पाऊँ। शायद तभी मेरे बच्चे किताब के माध्यम से ही सही, लेकिन एक दूसरे समुदाय के बच्चों के दोस्त बन पाएँगे, और उनके जीवन की कहानियों में डूबते हुए काँच के दरवाज़े को शायद पार कर पाएँगे।

नीतू यादव: *मुस्कान* संस्था, भोपाल के शिक्षा समूह में पिछले 12 वर्षों से कई कार्यक्रमों का हिस्सा रही हैं। वर्तमान में, बतौर पुस्तकालय समन्वयक काम कर रही हैं। 2017 में वे पराग द्वारा संचालित 'लायब्रेरी एजुकेटर कोर्स' की प्रतिभागी थीं।

सभी चित्र *इस्मत की ईद* किताब से साभार।

सन्दर्भ:

1. बाल साहित्य में समावेशन की सम्भावनाओं की खोज - ऊषा मुकुंदा
2. बाल साहित्य में विविधता की ज़रूरत- सेमिनार अगस्त 2019, *मुस्कान* का अवधारणा लेख - शिवानी तनेजा
3. बच्चों के विकास में साक्षरता और किताबों का महत्व: बौद्धिक, भावात्मक एवं सामाजिक आयाम - डेनीस वॉन स्टोकर

